# महाकवि भास के नाटकों में वर्णित संस्कृति का चित्रण

**डॉ. उषा नागर**

व्याख्याता संस्कृत
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर

**शोध सारांश**

संस्कृति किसी भी राष्ट्र का आत्म तत्त्व होती हैं। किसी भी समाज अथवा राष्ट्र में गहराई तक व्याप्त गुणों का सामूहिक नाम संस्कृति हैं। साहित्य, भाषा, वेशभूषा, परम्पराएँ, पूजा–पद्धति एवं पर्व आदि के सम्मिश्रण से संस्कृति की संरचना होती हैं। कला, संगीत, साहित्य, विज्ञान, शिल्प, धर्म, दर्शन आदि संस्कृति के प्रकट पक्ष हैं। भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति हैं। यह संस्कृति प्राचीनकाल में सबके द्वारा स्वीकृत संस्कृति हैं। इसीलिए यजुर्वेद का ऋषि इसकी प्राचीनता और स्वीकार्यता को दृष्टिगत रखते हुए उद्घोष करता है–सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा ।

**मुख्य शब्द –** साहित्य, संस्कृति, आध्यात्मिकता, शिल्प, धर्म, दर्शन, परम्परा।

साहित्य संस्कृति एवं समाज का दर्पण होता है। मनीषी कवि अपनी सारस्वत साधना के द्वारा लेखनी के माध्यम से इसको अपने काव्य में चित्रित करता हैं । प्रायः संस्कृत के सभी कवियों ने अपनी कृतियों में भारतीय संस्कृति का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया हैं। महाकवि भास भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के समुपासक थे। उन्होंने न केवल अपने जीवन में भारतीय संस्कृति के समस्त पक्षों को साधुतया निर्वाह किया अपितु उन्होंने पद–पद पर इस विश्ववारा संस्कृति का अपने साहित्य में निरूपण भी किया हैं। भारतीय संस्कृति का सौन्दर्य भासकृत रूपकों में सर्वत्र देदीप्यमान हैं।

विश्व के सभी देशों की अपनी संस्कृति होती हैं। जो वहां रहने वाले सभी मनुष्यों के लिए महत्त्वपूर्ण होती हैं किन्तु भारतीय संस्कृति को समस्त विश्व समुदाय हृदयंगम करना चाहता हैं । यह सत्य सनातन संस्कृति अत्यन्त प्राचीन एवं विशिष्ट है। कालक्रमानुसार विदेशी आक्रमणकारियों ने अपनी–अपनी संस्कृति को भारतीयों पर आरोपित करने का प्रयास किया, परन्तु भारतीय संस्कृति सभी संस्कृतियों को अपने में आत्मसात् करके स्वास्तित्त्व को अक्षुण्ण बनाये हुए हैं। भारतीय संस्कृति के ये दिव्यगुण चिरन्तन और शाश्वत है। यह संस्कृति अनेक मान्यताओं की प्रणायिनी है तथा बहुत से गौरव पूर्ण तत्त्वों को समाहित किए हुए हैं।

आध्यात्मिकता भारतीय संस्कृति का सार तत्त्व है। यही तत्त्व इसको अमर, अलौकिक तथा गुणसम्पन्न बनाता हैं। इस संस्कृति में आध्यात्मवाद का विशिष्ट स्थान हैं। भारतीय संस्कृति

मानव की आधिभौतिक उन्नति के साथ–साथ आध्यात्मिक उन्नति पर बल देती हैं। काम, क्रोध लोभादि इस संस्कृति के ना नहीं हैं। प्रत्युत सर्वव्याप्त ईश्वर का साक्षात्कार ही इसका परमध्येय हैं। प्रत्येक प्राणी परमतत्त्व से उत्पन्न होकर उसी विलीन हो जाता हैं । इस प्रकार की भारतीय संस्कृति का दिग्दर्शन भास के अतिरिक्त और कौन करा सकता हैं? ।

**"एतादृशी भारतसंस्कृतिः को वक्तुं समर्थो भुवि भासमानाम्" ।**

भास के रूपकों में निरूपित आध्यात्मिकता से ज्ञात होता हैं कि भास ने भी उपनिषदों का अध्ययन किया है क्योंकि यही वर्णन उपनिषदों में प्राप्त होता है।

**यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति ।**
**यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति । तद्विविजिज्ञासस्व । तद् ब्रह्मेति ।।**
**'अजो नित्यः शाश्वतोयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।'**

महाकवि भास के द्वारा वर्णित संस्कृति नीतिपक्ष तथा अध्यात्मपक्ष के द्वारा अनुप्राणित है। यह संस्कृति आत्मोपलब्धि पर बल देती हैं। इसका प्रमाण हमें चारुदत्त नामक रूपक में प्राप्त हाता है। जिसमें एक जुआरी को जब आत्मज्ञान होता है तो वह आध्यात्मिकता की शरण ले लेता हैं। संन्यास ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार आध्यात्मिकता का मुख्य लक्ष्य मानव का आत्मोकोत्कर्ष ही है। इसी आधार पर भारतीय संस्कृति वैदिक युग में स्वीकय । सर्वोत्कृष्ट रूप में प्रतिफलित हुई। भारत के इस अध्यात्म प्रधान गुण के आधार पर ही प्रतिष्ठा है। भास की रूपक पर आहार, व्यवहार, विहार, वस्त्र, परिधान, स्नानादि सामान्य कर्मों में ही भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिकता झलकती है।

आध्यात्मिकता की विशद विवेचना महाकवि भासकृत प्रतिमानाटक में अतिशय रूप से दिग्दर्शित होती है। आध्यात्मिकता के अन्तर्गत उपासना का स्वरूप मुख्य रूप से परिलक्षित किया गया है। उपासना विषयक कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य इस रूपक में निर्दिष्ट है । तत्कालीन जन विविध देवों की उपासना करते थे, जिसके लिए मन्दिरों का भी निर्माण किया गया था। विशेष पर्व मन्दिरों में ही निष्पन्न होते थे। देव पूजन मन्त्रोच्चारण पूर्वक किया जाता था। शूद्रों के लिए मन्त्रोच्चारण का निषेध था–

**कामं दैवतमित्येव युक्तं नमयितुं शिरः।**
**वार्षलस्तु प्रणामः स्यादमन्त्रार्चितदैवतः ।।**

तपोवनों में मन्दिरों का निर्माण होता था । यथा तपोवन में सीता कहती है –
सीताः – आर्य! उपहारसुमनआकीर्णः सम्मार्जित आश्रमः। आश्रमपदविभवेनानुष्ठितो देवसमुदाचारः।

इस प्रकार तत्कालीन आध्यात्म परम्परा में ईश्वर पर विश्वास तथा ईश्वर को निराकार माना जाता था। राम के वनगमन पर राजा दशरथ कहते हैं–

**पुरुषविशेषा ईदृशीमपदं प्राप्नुवन्तीति विधिरनतिक्रमणीयः'।**

ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है ऐसा सोचकर राम चतुर्थ अंक में कहते हैं –

**तं चिन्तयामि नृपतिं सुरलोकयातं**
**येनायमात्मजविशिष्टगुणो न दृष्टः ।**
**ईदृग्विधं गुणनिधिं समवाप्य लोके**
**धिग् भो! विधेर्यदि बलं पुरुषोत्तमेषु ।।**

समाज में यह मान्यता थी कि मोक्ष की प्राप्ति के बाद पुनर्जन्म नहीं होता। यथा–

**तैस्तर्पिताः ... ..... बलाद् म्रियन्ते ।**

भारतीय आध्यात्म परम्परा में धर्म का अतिमहत्त्वपूर्ण स्थान है। महर्षि मनु साक्षात् धर्म के चतुर्विध लक्षण कहे हैं –

**वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।**
**एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ।।**

महर्षि मनु ने धर्म के दश लक्षण भी विहित किये हैं–

**धतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।**
**धी विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।**

भास ने स्वरूपकों में अनेक स्थानों पर धृतिक्षमा आदि का निर्देश किया है। प्रतिमानाटक में विशद रूप से एतद् सम्बन्धी उल्लेख दिग्दर्शित होता है । पंचम अंक में रावण कहता है– **रावणः काश्यपगोत्रोस्मि । साङ्गोपाङ्ग..... वेदमधये।**

प्रत्येक मनुष्य स्मृतिशास्त्रों का अध्ययन तथा न्यायानुसार धर्माचरण करते थे। रावण पुनः कहता है –

**"मानवीयं धर्मशास्त्रम् ।"**

इस प्रकार महर्षि मनुप्रणीत धर्मशास्त्र का अध्ययन किया जाता है, ऐसा भास के रूपकों में अभिव्यक्त होता है। भासप्रणीत रूपकों की पात्र परम्परा सर्वदा सदाचार पूर्वक धर्म का पालन करती हुई दिखाई देती है। भास के पात्र निन्दा का परित्याग कर अध्यात्म में रहते थे। बड़ों का सम्मान देवतुल्य होता था, इसका साक्षात् प्रमाण भासकृत प्रतिमानाटक में परिलक्षित होता है –

**रामः – अतः परं न मातुः परिवादं श्रोतुमिच्छामि।**
**महाराजस्य वृत्तान्तस्तावदभिधीयताम् ।।**

इस प्रकार माता की निन्दा सदाचार और धर्म के विरुद्ध मानी जाती थी। धैर्य को धर्म का मुख्य लक्षण कहा है। यह मनुप्रोक्त धर्म के दश लक्षणों में प्रमुख है। इसका उदाहरण तब प्राप्त होता है जब राम का वनगमन वृतान्त सुनकर लक्ष्मण क्रोधित हो जाते हैं तब राम कहते हैं –

**अक्षोभ्यः क्षोभितः केन लक्ष्मणो धैर्यसागरः।**
**येन रुष्टेन पश्यामि शताकीर्णमिवाग्रतः ।।**

जब प्रतिमानाटक के तृतीय अंक में भरत दशरथ की प्रतिमा को देखते हैं तब स्वयं भरत धैर्यधारण करके कहते हैं–

**"हृदय! भव सकामं यत्कृते शंकसे त्वं श्रृणु....तत्र देहो विशोध्यः।।"**

भासकालीन समय में देवताओं पर दृढ़ विश्वास था। समाज में विभिन्न देवों की अर्चना विभिन्न प्रकार से की जाती थी। समाज विधि के द्वारा प्रतिपादित नियमानुसार चलता था। विधि द्वारा प्रतिपादित नियमों का उल्लंघन दण्डनीय होता था । यथा –

**भोः! कष्टम् । ईदृग्विधाः पुरुषविशेषा।**
**ईदृशीमापदं प्राप्नुवन्तीति विधिरनतिक्रमणीयः ।।**

अतिथि अभ्यागत भी देव सदृश पूजनीय होते थे। जैसे इन्द्रवेशी रावण को अतिथि समझकर राम सीता को कहते हैं–

**"शुश्रूषस्व भगवन्तम्।।**

भास के रूपकों में देव सम्बन्धी अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं। यथा सीतापहरण के समय रावण अपने पराक्रम को व्यक्त करने के लिए विभिन्न देवों का नाम लेता है। यहां शुक्र, कुबेर, सोम, यम आदि देवों का उल्लेख है –

**भग्नः शक्रः कम्पितो वित्तनाथः कृष्टरू सोमो मर्दितः सूर्यपुत्रः।**
**द्यिग भोः स्वर्ग भीतदेवैर्निविष्टं धन्या भूमिवर्तते यत्र का सीता।।**

भारतीय संस्कृति में अध्यात्म की प्रधानता है। महाकवि भास के रूपकों में यह अध्यात्म तत्त्व पूर्णतः अनुस्यूत है। देव परायण होते हैं। भासकृत रूपकों के अधिकांश पात्र देवकोटि के सार ही हैं। इससे भी स्पष्ट होता है कि भास के रूपकों में अध्यात्म तत्त्व पद–पद पर विद्यमान है।
भास ने स्वरूपकों में विभिन्न सौन्दर्य सम्बन्धी तत्त्वों का उल्लेख किया है। सौन्दर्य चित्रण में तत्कालीन समाज के वेशभूषा, प्रसाधन तथा आभूषण आदि का उल्लेख मुख्य हैं। विभिन्न कला यथा नृत्यकला, गीतकला, गायनकला, वाद्यकला आदि का पद–पद उल्लेख भास के रूपकों में दिग्दर्शित होता है।

भास के रूपकों की पात्र परम्परा में विभिन्न वस्त्रों का उल्लेख मिलता है वर्गानुसार पृथक–पृथक वेश्भूषा थी। धनाढ्य वर्ग विशेष परिधान, मध्यम वर्ग किंचित् न्यून परिधान तथा निम्न वर्ग अतिन्यून परिधान में शोभायमान होता था। भासकालीन समाज कपास और कौशेय वस्त्रों से पूर्णतः परिचत थे। फिर भी वस्त्रों के प्रकार तथा धन सम्पत्ति वैभव रूप सौन्दर्य के परिचायक थे। सामान्यतः कौशेय वस्त्रों का प्रयोग राजवंश परम्परा में किया जाता था। महाकवि भास ने युधिष्ठिर को चित्रित करते हुए लिखा है कि –

**श्लाघ्यश्रीरभिमानदीप्तहृदयो दुर्योधनो मे पिता**
**तुल्येनाभिमुखं रणे हत इति त्वं शोकमेवं त्यज ।**
**स्पृष्ट्वा चौव युधिष्ठिरस्य विपुलं क्षौमापसव्यं भुजं**
**देयं पाण्डुसुतैस्त्वया मम समं नामावसाने जलम् ।।**

दूतवाक्य में दुर्योधन के द्वारा श्वेत वर्णोत्तरीय धारण का अतीव सुस्पष्ट एवं सौन्दर्य से परिपूर्ण वर्णन प्राप्त होता है। चारुदत्त नाम रूपक में अधिवस्त्र के लिए प्रवारक शब्द का प्रयोग किया गया है। प्रवारक को नारी और पुरुष समानरूप से धारण करते थे। चारुदत्त स्वयं अपना प्रवारक महिला पात्र के लिए देता है और मुक्त कण्ठ से उसकी प्रशंसा करता है–

**अविज्ञातप्रयुक्तेन धर्षिता मम वाससा।**
**संवृता शरदभ्रेण चन्द्रलेखेव शोभते ।**

चारुदत्त नामक रूपक में भास पुनः पुनः प्रवारक शब्द का प्रयोग करते हैं। गणिका वसन्तसेना का कथन कहती है कि यज्ञोपवीत ही चारुदत्त के प्रवारक का कार्य करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रवारक स्कन्ध पर धारणीय वस्त्र होता था। जिसको प्रतिज्ञायौगन्धरायण में नारी विषयक सौन्दर्य के चित्रण में भी इसका वर्णन प्राप्त होता है–

**''एकस्य शारिकयाकारमिपरस्य मूल्येन''।**

मृच्छकटिकम् तृतीय अंक में नारी विषयक सौन्दर्य की श्रीवृद्धि का स्पष्ट उल्लेख है । भास के रूपक पञ्चरात्र में राजा को, प्रतिज्ञायौगन्धरायण में मन्त्री को, चारुदत्त में राजपाल को प्रवारक से सौन्दर्यवान् चित्रित किया गया है। समाज में प्रवारक धारण करना सम्मान तथा श्रेष्ठता रूपी सौन्दर्य का परिचायक माना जाता था। संस्कृत की नाट्य परम्परा में प्रकृति प्राप्त वल्कल वस्त्रों को मुनिजन धारण करते थे। भास ने भी रूपकों की चिन्तन धारा में वल्कल वस्त्रों का वर्णन किया है। प्रतिमानाटक में सीता के द्वारा धारण

किये गये वस्त्र से राम उनको तापसी अनुरूप मानते थे। वल्कल वस्त्रों को धारण कर तापसोचित जीवन यापन करने के लिए आश्रम निवास किया जाता था।

अभिषेकनाटक में वल्कल वस्त्रों की सौन्दर्यता का प्रदर्शन भास ने बालि के मुख से निस्तृत शब्दों के द्वारा किया है। प्रतिमानाटक में भास लिखते हैं कि जिस प्रकार गजवशीकरणार्थ अंकुश का प्रयोग तथा इन्द्रिय रूपी अश्वों को निगृहीत करने के लिए लगाम का प्रयोग किया जाता है, ठीक वैसे ही तपरूप संग्राम में वल्कल वस्त्ररूपी कवच का धारण करना चाहिए –

**तपः सङ्ग्रामकवचं नियमद्विरदाङ्कुशः।**
**खलीनमिन्द्रियाश्वानां गृह्यतां धर्मसारथिः ।।**

वनवासी काष्ठ की चरणपादुका धारण करते थे। वनवास काल में राम ने काष्ठ की चरण पादुका को धारण किया था–

**"पादोपभुक्ते तव पादुके म एते प्रयच्छ प्रणताय।"**

वल्कल वस्त्रों के अतिरिक्त भास ने समर वेश सौन्दर्य का भी वर्णन पर्याप्त मात्रा में किया है। कर्णभार के समर परिच्छेद में वीरों का परिधान सौन्दर्य दर्शाया गया है। धनुर्गाणास्त्र तथा कवचादि समर वेश के अंग माने हैं। भास ने प्रतिमा नाटक में प्रतिहारी के सौन्दर्य वेतांशुक धारि के समान किया है–

**चरति पुलिनेषु हंसी काशांशुकवासिनी सुसंदृष्टा ।**
**मुदिता नरेन्द्रभवने त्वरिता प्रतिहाररक्षीव।।**

भारतीय परम्परा में सौन्दर्य की श्रीवृद्धि के लिए बहुमूल्य अलंकारों तथा रत्नों को धारण करने का उल्लेख प्राप्त होता है। सौन्दर्य के लिए नारी समाज विभिन्न आभूषणों को प्रयोग में लाता था। भास ने स्त्री तथा पुरुष दोनों के लिए आभूषणों का उल्लेख किया है। अलंकार प्रायः स्वर्ण, रत्नों या प्रकृति प्रसूत पुष्पों के होते थे। भास ने विभिन्न आभूषणों का वर्णन विभिन्न अंगों के लिए किया है। स्वप्नवासवदत्तम् में कर्णाभूषण के रूप में कर्णचूलिका का वर्णन किया है। यथा –

**"इयं भर्तृदारिका उत्कृतकर्णचूलिकेन व्यायामसञ्जातस्वेद बिन्दु– विचित्रितेन"।**

भास ने ग्रीवा सौन्दर्य के लिए मोतियों के आभूषण की चर्चा की है। यह एक सुदीर्घ गलहार था जिसके मध्य में मौक्तिक प्रवालादि ग्रथित होते थे। यथा–

**"ते कु सु मिता नाम, प्र वालान्तरितै रिव मौक्तिकलम्बकैराचिताः कुसुमैः।"**

हाथों में केयर (बाजबन्द) धारण किया जाता था। अविमारक में एक विचित्र मुद्रिका का वर्णन है जिसके धारण। मनुष्य अदृश्य हो जाता था तथा पुनः प्रकट हो जाता था। पुष्पों का प्रयोग केश के सौन्दर्य के लिए किया जाता था। स्त्रियां स्वकेश विन्यास में उन्मक्त धारण करती थी। प्रसाधन आदि के रूप में गन्ध चन्दनादि का प्रयोग किया जाता था। चन्दन लेप सामान्यतः राज– परिवार के लोग ही करते थे। का उपयोग शरीर को सुगन्धित करने के लिए किया जाता जिसका उपयोग पुरुष वर्ग अधिक करता था।

अन्ततोगत्वा यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज भी एतत् कालीन समाज के समान सौन्दर्य प्रसाधन के प्रति अधिक था। अनवरत सौन्दर्य प्रसाधन वस्त्राभूषणों के द्वारा स्वकीय रूप सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए किया जाता था।

भास ने अपने साहित्य में विभिन्न परम्पराओं का उल्लेख किया जो संस्कृति और अपसंस्कृति दोनों की संवाहक हैं। भास के रूपकों में आखेट, द्यूत, दासत्व, नगरवधु आदि की परम्परा का उल्लेख प्राप्त होता है । भास ने अविमारक में सौ प्रकार के आखेट का वर्णन है । दूतवाक्य में भी आखेट का वर्णन किया है–

**''वने पितृव्यो मृगयाप्रसङ्गतः कृतापराधो मुनिशापमाप्तवान्।''**

अभिषेक नाटक में अप्रत्यक्ष रूप से आखेट का सन्दर्भ प्राप्त होता है । प्रतिमानाटक में तापसवेशधारी रावण राम को मृग लाने को कहता है, तब राम कहते हैं– .

**सौवर्णान् वा मृगांस्तान् मे हिमवान् दर्शयिष्यति ।**
**भिन्नो मद् बाणवेगेन क्रौञ्चत्वं वा गमिष्यति ।।**

भास ने अपने रूपकों में आखेट का वर्णन अधिक नहीं ० किया । यत्र–तत्र कुछ संकेत ही प्राप्त होते हैं। द्वितीय परम्परा के रूप में दुर्गुण द्यूतक्रीड़ा का भी वर्णन भासकृत रूपकों में प्राप्त होता है। दूतवाक्य में युधिष्ठिर के द्वारा द्यूत खेलने का वर्णन है –

**सत्यधर्मघृणायुक्तो द्यूतविभ्रष्टचेतनः ।**
**करोत्यपाङ्गविक्षेपैः शान्तामर्ष वृकोदरम् ।।**

द्यूतक्रीड़ा ज्येश्ठपाण्डु को अत्यधिक प्रिय थी। द्रोणाचार्य ने द्यूत को व्यसन कहा है। दूतघटोत्कच में धृतराष्ट्र द्यूतदक्ष शकुनि को कौरवकुल का दोशी मानते थे –

**भूमिकम्पः सशब्दोयं कुतो नु सहसोत्थितः।**
**उल्काभिश्च पतन्तोभिः प्रज्वालितमिवाम्बरम् ।।**

मध्यमव्यायोग में भी द्यूत का उल्लेख मिलता है। भास के अनुसार द्यूतक्रीड़ा से मनुष्य का सर्वनाश हो जाता है। राजभवनों में द्यूत सभाओं का आयोजन किया जाता था। इन सबके अतिरिक्त चारुदत्त में भी द्यूत का उल्लेख प्राप्त होता है। भास ने अपने रूपकों में द्यूत का विवरण अपने मनोरंजन के साधन के रूप में प्रस्तुत किया है साथ ही उन्होंने उसके दुष्परिणामों को कहा है। भासप्रणीत रूपकों में दासप्रथा का भी उल्लेख प्राप्त होता है। राजपरिवार में राजकुमारों के दास नियुक्त होते थे। दाससेवा कार्य में तत्पर होते थे। निद्रा न आने पर राजकुमारी कुरंगी को दासी कथा सुनाती थी। स्वप्नवासवदत्तम् में धनी पदमावती दासियों के साथ आश्रम जाती थी। राजकुमारियाँ भी सखि भावना से उनके साथ खेलती थी तथा अपने सभी रहस्य उनसे बांटती थी। दासियां भी प्रत्येक कार्य में उनकी सहायता करती थी। भासकालीन दासप्रथा से ज्ञात होता है कि दास उच्च जीवन व्यतीत करते थे। प्रत्येक अनुकूल–प्रतिकूल परिस्थिति में स्वामी के सहयोगी होते थे। दास और स्वामी के मध्य द्वेश भावना नहीं होती थी।

भासप्रणीत रूपकों में नगरवधु की परम्परा भी प्रतीत होती है। भास ने चारुदत्त में वसन्तसेना को गणिका के रूप में प्रस्तुत किया है। जो नृत्यकला में दक्ष थी –

**कि त्वं भयेन परिवर्तित सौकुमार्या**
**नृत्तोपदेश विशदौचरणौ क्षिपन्ती।**
**उद्विग्न चन्चल कटाक्ष निविष्ट दृष्टि**
**व्यांघ्रानुसार चकिता हरिणीव यासि ।।**

भास ने वेश्या को सामान्य नारी के समान ही प्रदर्शित किया है। अविमारक में विदूशक स्वयं को कहता है 'अलब्धभोग्या वेश्यामिव' । अतः वह भोग्या नहीं है। वेश्या वेश्यालय में रहती थी। वह विविध गन्ध तथा

आभूषणों का प्रयोग करती थी, वाक्कला निपुणा होती थी, वेश्या वंचनाकला में चतुर भी होती थी। चारुदत्त कहता है–

**भवांस्तावदविश्वासी शीलज्ञो मम नित्यशः ।**
**किं पुनः सः कलाजीवी वञ्चनापण्डितो जनः ।**

भास ने यद्यपि अपनी चिन्तन परम्परा में गणिका को सामान्य नारी के समान ही प्रस्तुत किया है तथापि जनसामान्य वृत्ति गणिका के प्रति निम्न स्तर की ही थी। भास ने अपने साहित्य में गणिका को देह व्यापार से अलग कर प्रेम मार्ग पर ले जाकर उसको सामान्य नारी का स्थान दिया है।

**सन्दर्भ :**


1. संस्कृत निबन्धवली दृ पृ. 30
2. तै0 उप0 3/1/3
3. श्रीमद्भगवद्गीता दृ 2/20
4. प्रतीमानाटक तृतीय अंक, श्लोक 5, पृ. 76
5. प्रतिमानाटक पंचम अंक, पृ. 125
6. प्रतिमानाटक द्वितीय अंक, पृ. 56
7. प्रतिमानाटक चतुर्थ अंक, श्लोक 22, पृ. 118
8. प्रतिमानाटक पंचम अंक, श्लोक 10, पृ. 137–138
9. मनु०–2/12
10. मनु0– षष्ठ अध्याय, श्लोक 91
11. प्रतिमानाटक अंक 5 पृ0 134
12. प्रतिमानाटक पंचम अंक, पृ. 134
13. प्रतिमानाटक प्रथम अंक, पृ. 32
14. प्रतिमानाटक प्रथम अंक, श्लोक 17, पृ. 33–34 15.
15. प्रतिमानाटक तृतीय अंक, श्लोक 9, पृ. 82–83
16. प्रतिमानाटक द्वितीय अंक, पृ. 56
17. प्रतिमानाटक पंचम अंक, पृ. 158
18. प्रतिमानाटक पंचम अंक, श्लोक 17, पृ. 144
19. ऊरुभंग–प्रथम अंक, श्लोक 53 पृ. 59
20. दूतवाक्य–प्रथम अंक, श्लोक 3
21. प्रवारकम् गृहीत्वा सहर्षमात्मगतम् । चारुदत्त–1 अंक,
22. चारुदत्त–प्रथम अंक, श्लोक 27 पृ. 58–59
23. तिज्ञायौगन्धरायण तृतीय अंक, पृ. 86
24. मृच्छ0–तृतीय अंक, पृ. 168
25. पञ्चरात्र प्रथम अंक, श्लोक 5
26. प्रतिज्ञा0 चतुर्थ अंक, पृ. 111
27. चारुदत्त प्रथम अंक, पृ. 86
28. अभिषेक प्रथम अंक, पृ. 36
29. प्रतिमा० प्रथम अंक, श्लोक 28, पृ. 43–44
30. प्रतिमा0 चतुर्थ अंक, श्लोक 25, पृ. 121

31. कर्णभार प्रथम अंक, श्लोक 4
32. पञ्चरात्र द्वितीय अंक, पृ. 55
33. प्रतिमा० प्रथम अंक, श्लोक 2 पृ. 4
34. स्वप्न दृ द्वितीय अंक, पृ. 36 चौखम्बा प्रकाशन
35. स्वप्न– चतुर्थ अंक, पृ. 54, चौखम्बा प्रकाशन
36. ऊरु0 दृ प्रथम अंक, श्लोक 51, चौखम्बा प्रकाशन
37. अविमारक– चतुर्थ अंक, पृ. 104, चौखम्बा प्रकाशन
38. चारुदत्त–प्रथम अंक, पृ. 122, चौखम्बा प्रकाशन
39. ऊरुभंग–प्रथम अंक, श्लोक 38, चौखम्बा प्रकाशन
40. अविमारक– प्रथम अंक, पृ. 150
41. दूतवाक्य दृ प्रथम अंक, श्लोक 21 पृ. 33
42. अभि0 दृ प्रथम अंक, श्लोक 19
43. प्रतिमा दृ पंचम अंक, श्लोक 12, पृ. 139
44. दूतवाक्य – प्रथम अंक, श्लोक 8
45. पञ्चरात्र – प्रथम अंक, पृ. 31
46. दूतघटोत्कच दृ प्रथम अंक, श्लोक 25, पृ. 30
47. मध्यम0 दृ प्रथम अंक, श्लोक 37
48. पञ्चरात्र दृ प्रथम अंक, श्लोक 18
49. ऊरुभंग दृ प्रथम अंक, पृ. 63
50. चारु0 – द्वितीय अंक, पृ. 57
51. अविमारक दृ तृतीय अंक, पृ. 58
52. स्वप्न दृ प्रथम अंक, पृ. 19
53. स्वप्न – प्रथम अंक, पृ. 53
54. स्वप्न दृ द्वितीय अंक, पृ. 55, 56, 61
55. चारुदत्त दृ प्रथम अंक, श्लोक 9, पृ. 28
56. अवि० दृ द्वितीय अंक, पृ. 40
57. चारु० – द्वितीय अंक, पृ. 48
58. चारु0 दृ प्रथम अंक, पृ. 32
59. चारु0 – चतुर्थ अंक, पृ. 88
60. चारुदत्त– तृतीय अंक, श्लोक 16 पृ. 123